बी. ए. एल. एल. बी.

6th sem.

Hindi

Unit - 1 राज्य में हिंदी की स्थिति

प्रश्न. 1 राज्य में हिन्दी की स्थिति ।

उत्तर. अनुच्छेद 345:- राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं के अधीन रहते हुए किसी राज्य का विधानमण्डल विधि द्वारा उस राज्य में प्रयोग होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिन्दी को उस राज्य की किसी सभी या शासकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग की जाने वाली भाषा के रूप में स्वीकार कर सकेगा ।

परन्तु राज्य का विधानमण्डल विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करें तब तक राज्यों के भीतर उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिसका इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था ।

अनुच्छेद 346:- किसी एक राज्य या दूसरे राज्य के बीच राजभाषा संघ में शासकीय प्रयोग किये जाने के लिए तत्समय प्राधिकृत भाषा एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच तथा किसी राज्य और संघ के बीच की भाषा होगी ।

परन्तु राज्य या दो से अधिक राज्य यह करार करते है तो उन राज्यों के बीच भाषा हिन्दी भाषा होगी ।

अनुच्छेद 347:- किसी राज्य की जनसंख्या के किसी अनुभाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के सम्बन्ध में विशेष उपबन्ध । यदि इसे निर्मित किये जाने पर राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि किसी राज्य की जनसंख्या का पर्याप्त भाग यह चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को राज्य भाषा मान्यता दी जाये तो यह निर्देश दे सकेगा की ऐसी भाषा को भी उस राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में से प्रयोजनों के लिये यह विनिश्चय करे एवं शासकीय मान्यता दी जाए ।

उच्च न्यायालय के निर्णयों एवं उच्चतम न्यायालयों की कार्यवाहियों में सामंजस्य रखने के लिए राजभाषा अधिनियम की धारा 7 के अनुसार उच्च न्यायालय की भाषा या आज्ञप्ति जहाँ दूसरी भाषा को दिये गए हैं वहां उनका अंग्रेजी अनुवाद उच्च न्यायालय द्वारा प्राधिकृत रूप में संलग्न होगा ।

राज्य विधायिका को हिन्दी या अन्य किसी भाषा में विधेयक लाने और अधिनियम पारित करने तथा राज्यपाल को अध्यादेश जारी करने तथा नियम विधिमय बनाने की सामर्थ्य दी गई है इसलिये उनके अनुवादों को प्राधिकृत पाठ की परिस्थिति की आवश्यकता महसूस की गई हैं । मूल पाठ प्राधिकारिक पाठ होता है परन्तु अनु. 348[3] की प्रक्रिया के कारण अंग्रेजी अनुवाद को भी प्राधिकारिक पाठ का दर्जा दिया गया है ।

इस समय राजभाषा अधिनियम की धारा 7 के अन्तर्गत राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश के उच्च न्यायालयों में हिन्दी के काम-काज की अनुमति है जहाँ दो या दो से अधिक प्राधिकारिक पाठ होते है ।

केन्द्र में हिन्दी की स्थिति

प्रश्न. 2 केन्द्र में हिन्दी की स्थिति ।

उत्तर. अनुच्छेद 343[1]:- संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी । संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग होने वाले अंको का रूप भारतीय अंको का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा ।

[2] इस संविधान के प्रारम्भ से 15 वर्ष की अवधि तक संघ के उन शासकीय प्रयोजन के लिये अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा, जिनके लिये उनका ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था ।

परन्तु राष्ट्रपति उक्त अवधि के दौरान आदेश द्वारा संघ के शासकीय प्रयोजनों में से किसी के लिये अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी भाषा का और भारतीय अंको के अन्तर्राष्ट्रीय रूप के अतिरिक्त देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा ।

इस निर्देश के पश्चात् भी आज तक हिन्दी को केन्द्र से राजभाषा का दर्जा नहीं मिल पाया है ।

अनुच्छेद 344 : राजभाषा आयोग:- राष्ट्रपति संविधान के प्रारम्भ से पाँच वर्ष की समाप्ति पर आदेशों द्वारा एक आयोग गठित करेगा यह आयोग एक सभापति और भिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा । आयोग लिखित मामलों पर राष्ट्रपति को अपनी सिफारिशें भेजेगा ।

(a) संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी भाषा के प्रयोग के विषय में ।

(b) एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच संचार और भाषा और उसके प्रयोग के बारे में राष्ट्रपति द्वारा आयोग से पूछे गए किसी अन्य विषय पर ।

तीस सदस्यों की एक समिति गठित की जाएगी जिसमें 20 लोकसभा और 10 राज्य सभा के सदस्य होंगे । राज्यसभा आयोग की सिफारिशों की परीक्षा करना तथा उन पर अपनी राय का प्रतिवेदन राष्ट्रपति को देना समिति का कर्तव्य होगा । राष्ट्रपति समिति के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात उसके किसी भाग के अनुसार निर्देश जारी कर सकेगे ।

92 वें संविधान संशोधन 2003 के पश्चात् अब आठवी अनुसूची में कुल 22 भाषाओं को राजभाषा के रूप में मान्यता प्राप्त है ।

राजभाषा संशोधन नियम 1987:-

1. तमिलनाडु को नियमों की परिधि से बाहर रखा गया ।
2. हिन्दी में प्राप्त सूचना का उत्तर हिन्दी में दिया जाए ।
3. हिन्दी में दक्षता प्राप्त करने का प्रयास किया जाए ।

अनुच्छेद 351: हिन्दी भाषा के विकास के लिये निर्देश:- संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामाजिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके ।

"महर्षि दयानन्द"

"मेरी आँखे उस दिन को देखने के लिये तरस रही है जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक सब भारतीय एक भाषा समझने और बोलने लग जाए ।"

हिन्दी के विकास में बाधाएँ:-

1. क्षेत्र वाद ।
2. अंग्रेजी के प्रति मोह ।
3. प्रतियोगी परीक्षाओं में अंग्रेजी का महत्व ।
4. एक सम्पर्क भाषा को ठीक से लागू न किया जाना ।

पारिभाषिक शब्द

प्रश्न # पारिभाषिक शब्दावली को स्पष्ट करते हुए इसका वर्णन कीजिए।

उत्तर- शब्दों के वर्गीकरण के कई आधार हैं। नाम तथा व्यापार के आधार पर संज्ञा एवं क्रिया ये दो भेद किये जाते हैं। रचना के आधार पर मूल तथा यौगिक भेद किये जाते हैं। शब्द किस भाषा से आया है, इस बात को ध्यान में रखकर तत्सम, तद्भव, देशज आदि वर्गीकरण किया जाता है।

प्रयोग के आधार पर दो तरह से वर्गीकरण किया जा सकता है : बहुप्रयुक्त (जिसका भाषा में बहुत ज्यादा प्रयोग होता हो), अल्पप्रयुक्त (जिसका भाषा में बहुत कम प्रयोग होता हो)। कुछ विद्वान अप्रयुक्त भेद भी मानते हैं, पर विचारने की बात यह है कि जो अप्रयुक्त है जिसका प्रयोग ही न होता हो उसे भेद मानने की भी जरूरत क्या है?

कुछ विद्वान प्रयोग के आधार पर शब्द के तीन भेद और करते हैं-

1. पारिभाषिक, 2. अर्द्धपारिभाषिक 3. सामान्य

पारिभाषिक शब्द की परिभाषा

पारिभाषिक ऐसा शब्द है, जो-

1. *विषय विशेष में प्रयुक्त किया जाता हो।*
2. *उस विषय विशेष से संबद्ध किसी सुनिश्चित धारणा को प्रकट करता हो।*
3. *जिसकी अर्थ सीमा सुनिश्चित हो।*
4. *तथा जो अन्य पारिभाषिक शब्द तथा उनके प्रयोगों से स्पष्टतः भिन्न हो।*

पारिभाषिक शब्द की विशेषताएं

1. *पारिभाषिक शब्द का अर्थ सुनिर्धारित होता है।*
2. *जिस विषय या सिद्धांत के लिए है, उसी से संबद्ध या वही अर्थ व्यक्त करता है।*
3. *एक विषय में एक धारणा को प्रकट करने हेतु एक ही पारिभाषिक शब्द होता है।*
4. *पारिभाषिक शब्द छोटा हो-प्रयोग में सुविधा हो।*
5. *सामान्यतः पारिभाषिक शब्द मूल हो-व्याख्यात्मक नहीं। जैसे 'अहिंसा' एक पारिभाषिक शब्द है, इसके स्थान पर 'किसी के प्रति हिंसा भाव न रखना' नहीं हो सकता, यह पारिभाषिक शब्द 'अहिंसा' की व्याख्या है।*
6. *एक ही विषय क्षेत्र से संबद्ध पारिभाषिक शब्दों में रूप की दृष्टि से सादृश्य हो तो संगत लगता है जैसे विज्ञान के विषय में 'ऑक्सीडेशन', 'रिडक्शन', 'हाइड्रोजीनेशन' आदि शब्दों के अपने विशेष अर्थ तो हैं ही, ये पारिभाषिक शब्द भी हैं, साथ ही इनके रूपों में एक सादृश्य है।*
7. *पारिभाषिक शब्द ऐसा हो जिससे उसके अर्थ से संबद्ध छाया को प्रकट करने वाले शब्द बनाये जा सकें। जैसे भाषा विज्ञान में एक पारिभाषिक शब्द है 'स्वन'। इससे 'स्वनिम', 'स्वनिमिकी', 'सहस्वन' आदि [illegible]*

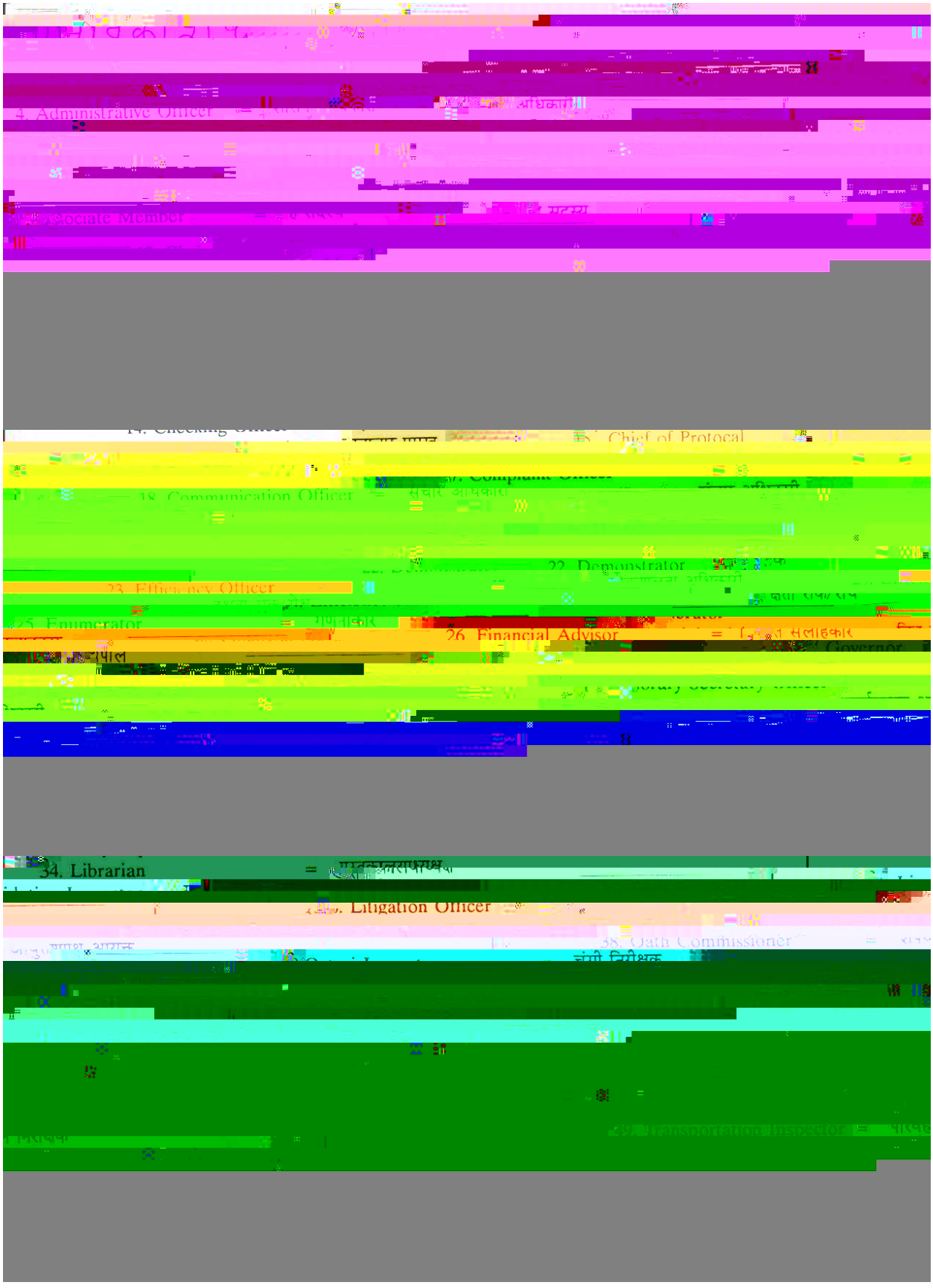

14. Checking Officer

Chief of Protocal

17. Complaint Officer

18. Communication Officer = संचार अधिकारी

34. Librarian = पुस्तकालयाध्यक्ष

49. Transportation Inspector =

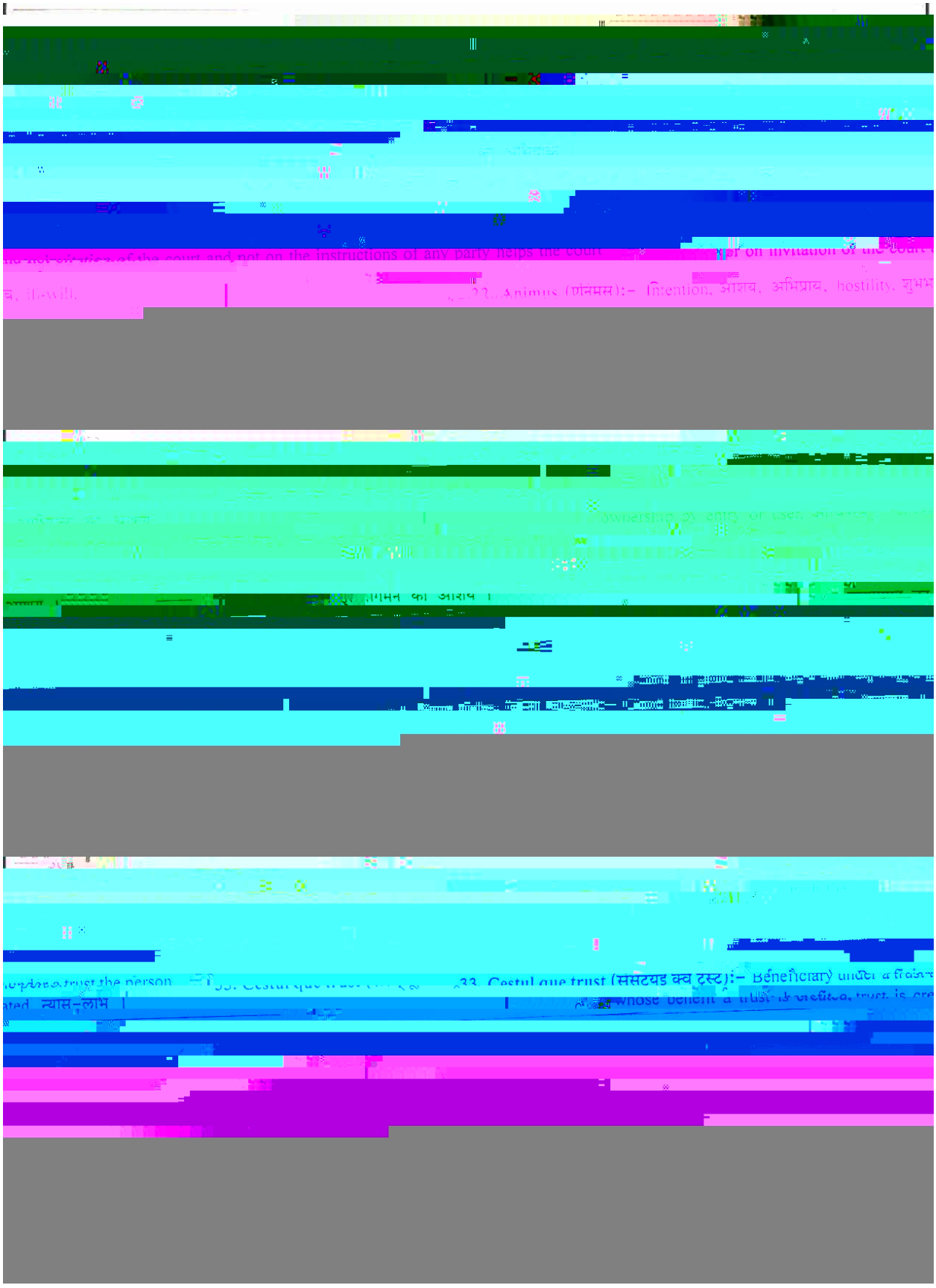

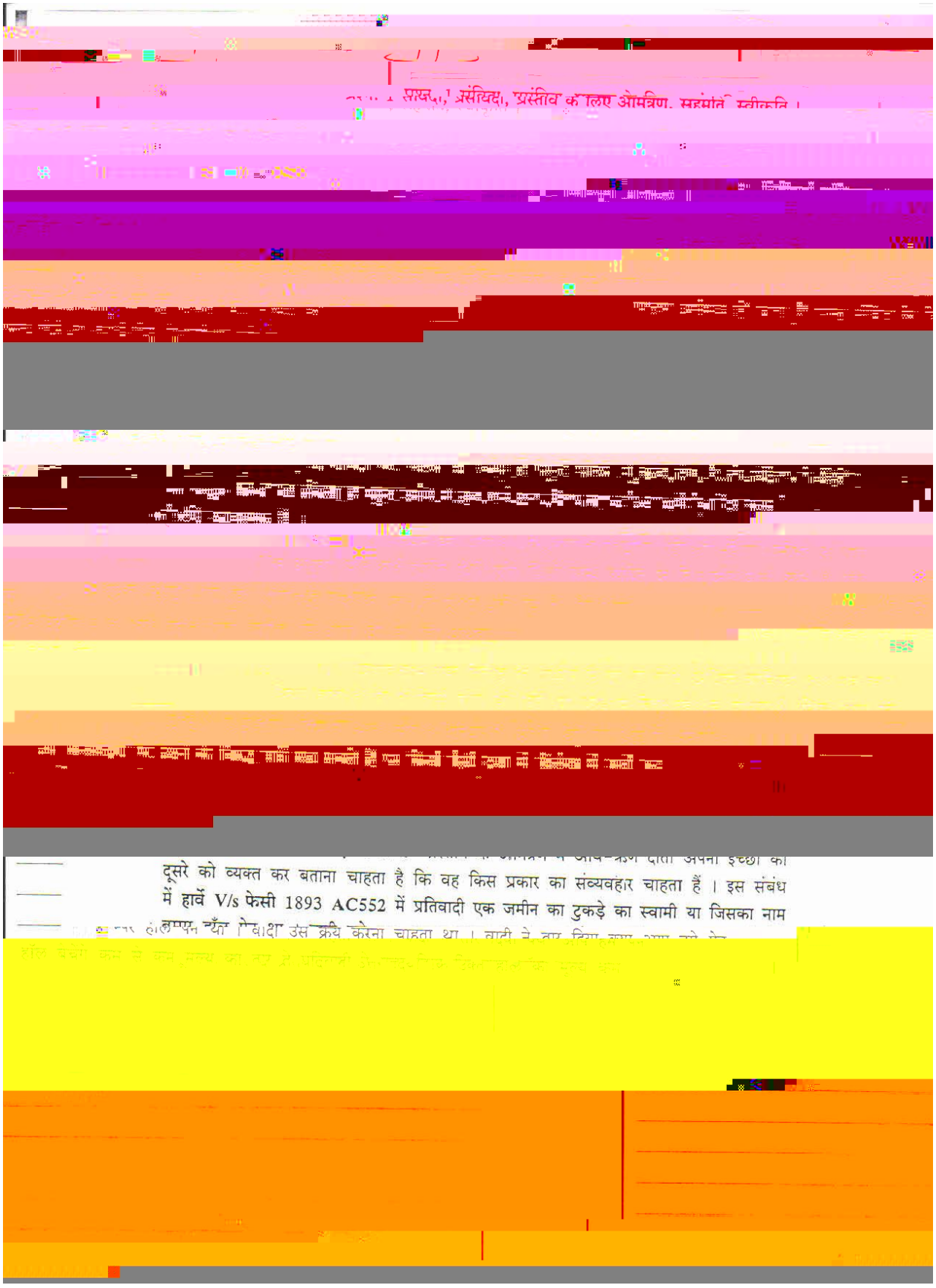

(१)

सिद्धान्त — प्राङ्न्याय का

मुकदमे

... को रोकना।

(मुकदमेबाजी) का अन्त ... वादी का

... कारण दुबारा लाने पर ... २ किसी व्यक्ति पर वाद ... (न्याय नहीं)

... प्रतिबंध लगाना।

३ न्यायालय का समय ... प्रदान करना।

परिभाषा — प्राङ्न्याय वह सिद्धान्त ... विवाद ... पुनः विचारण ... जरूरत नहीं ...

रोमन विधि शास्त्र के ... प्राङ्न्याय का सिद्धान्त ... सूत्रों पर आधारित है।

इंटरेस्ट रिपब्लिका ... (मुकदमे बाजी का अंत)

२. नेमो डेबेट बिस वेक्सरी ... एक व्यक्ति पर ... (दो बार परेशान ... जाने से सुरक्षा)

... ३ रेस जुडिकेटा प्रो वेरिटेट ऐक्सिपिटुर — किसी न्यायिक ... (निर्णय) जरूरी रूप से सही स्वीकार किया ... विनिश्चय ... जाना।

... प्राङ्न्याय का सिद्धान्त ... में अपर्याप्तता ... लोक नीति ... नियम है जो न्याय के क्षेत्र ... रखता है।

...श्यक शर्तें –

प्राङ्न्याय की आवश्...

(2) पूर्ववर्ती वाद और पश्चात्वर्ती वाद के बीच –

में किसी आवेदन का किया जाना प्रत्याशित हो जहाँ कोई आवेदन किया गया है वह कोई ऐसा व्यक्ति जो ऐसे आवेदन की सुनवाई मे न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने के अधिकार का दावा करते हैं । उसके बारे में केविएट दायर कर सकेगा ।

2. जहाँ उपधारा के अधीन कोई केविएट दायर किया गया है वहाँ वह व्यक्ति जिसके द्वारा केविएट दायर किया गया है उस व्यक्ति पर जिसके द्वारा उपधारा (1) के अधीन ...

3. उपधारा (1) के अधीन कोई केविएट दायर करने के पश्चात् किसी वाद या कार्यवाही ... से कोई आवेदन फाइल किया जाता हैं वहाँ न्यायालय आवेदन की सूचना केविएटकर्त्ता को देगा ।

4. जहाँ उपधारा (1) के अधीन कोई केविएट दायर किया गया है वहां ऐसी केविएट उस तारीख से 90 दिन के अवसान के पश्चात् लागू नहीं होगा ...

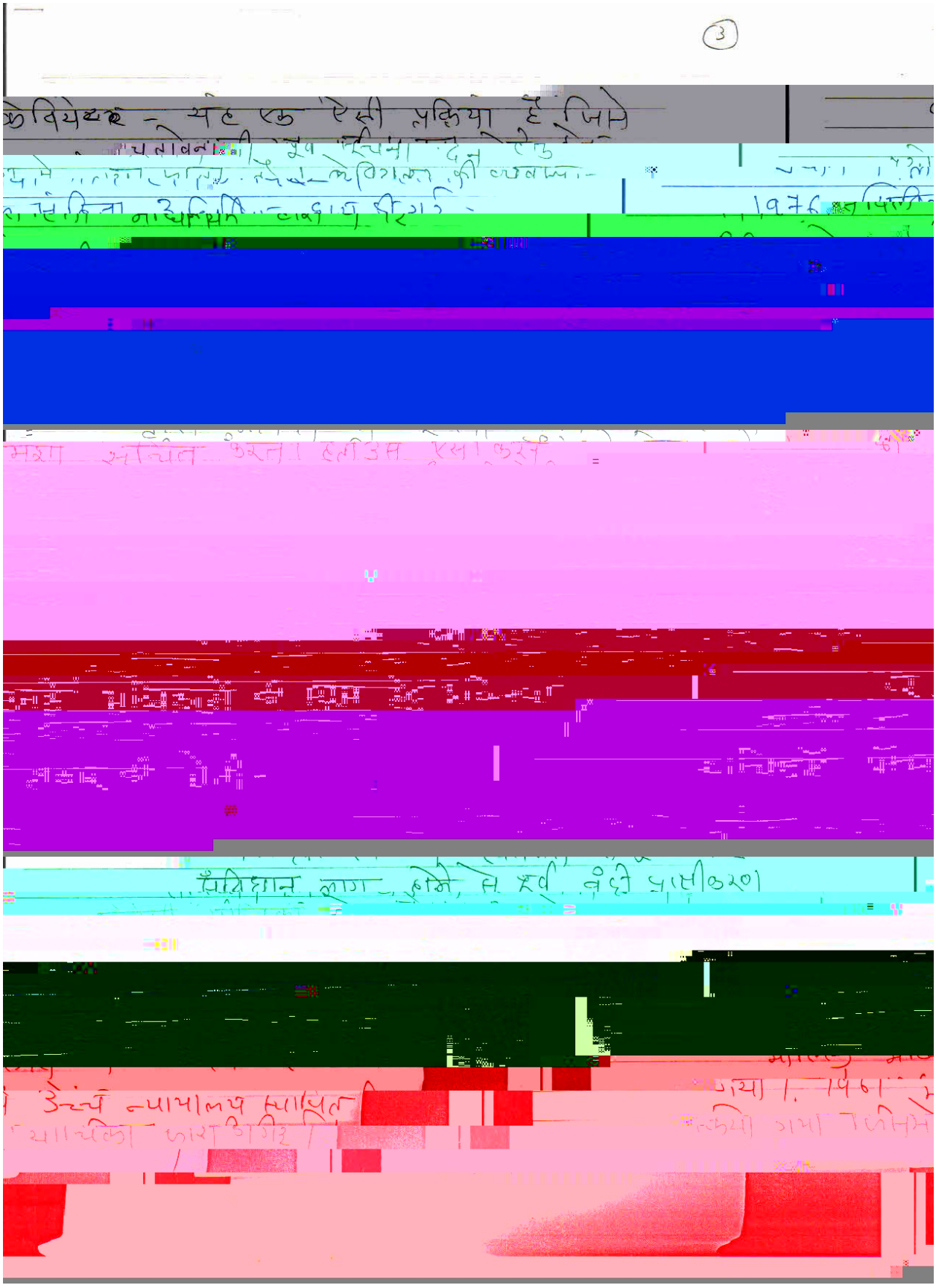

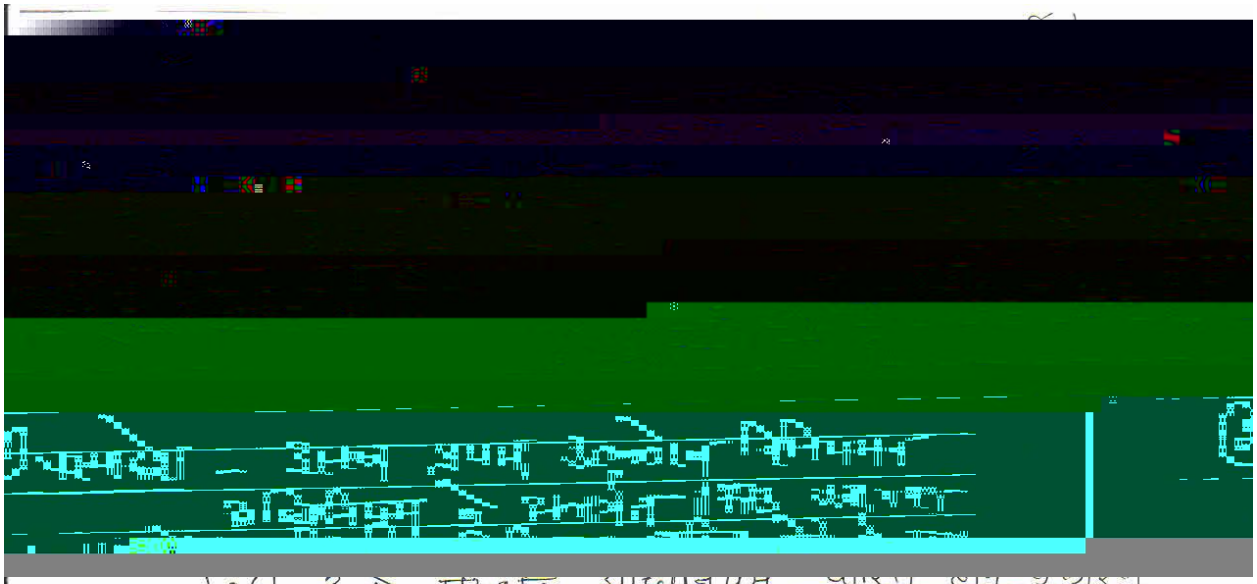

[illegible]

1961 ई में हाईकोर्ट अधिनियम पारित होने पर यह अधिकार उच्चन्यायालयों को सौंप दिया गया। संविधान के अनुच्छेद 32 व 226 के अधीन उच्चतम (ख) न्यायालय व राज्य के उच्च न्यायालयों को परमादेश जारी करने की शक्ति प्रदान की गई।

(3) <u>प्रतिषेध</u> :- भारत में प्रतिषेध की याचिका का प्रारंभ 1774 में न्यायिक चार्टर से हुआ विभिन्न याचिकाओं के बाद कालांतर मद्रास और बंबई में सुप्रीम कोर्ट की स्थापना होने पर यह अधिकार उन्हें प्राप्त हुए।

संविधान के अनुच्छेद 226 (1) के अधीन हर उच्च न्यायालय को अन्य याचिकाओं की भांति प्रतिषेध की याचिका जारी करने का अधिकार दिया गया।

(4) <u>अधिकार पृच्छा</u> — इसे जारी करने की चर्चा कार्कहिल द्वारा 1717 के वाद में मिलती है केम्पटन कार्कहिल कलकत्ता के कमिश्नर चुने गए जिनकी उम्मीदवारी का प्रस्ताव कुछ ऐसे लोगों द्वारा दिया गया जिनका नाम मतदाता सूची में नहीं था। पराजित (विपक्षी) उम्मीदवारों द्वारा अधिकार पृच्छा की याचिका दायर कर कार्कहिल की नियुक्ति को चुनौती दी।

निष्पादन

प्रश्न # आज्ञप्ति अथवा आदेश के निष्पादन से आपका क्या तात्पर्य है? निष्पादन के लिए कौन आवेदन कर सकता है तथा किसके विरुद्ध किया जा सकता है?

उत्तर- न्यायालय की प्रक्रिया द्वारा डिक्रियों तथा आदेशों को लागू करना निष्पादन कहलाता है जिससे कि निर्णीत-ऋणदाता निर्णय के फल को वसूल करने में सक्षम होता है। वे ढंग जिनमें कि न्यायालय अपने आदेशों तथा डिक्रियों का निष्पादन कर सकता है, संहिता की धाराएं 36, 74, आदेश 21 में प्रस्तुत किए गए हैं। निष्पादन न्यायालय के कार्य न्यायिक हैं न कि सिर्फ अनुसचिवीय। ये उपबंध उन डिक्रियों के निष्पादन में लागू होते हैं जो निष्पादन में सक्षम हो, अर्थात् सिर्फ घोषणात्मक डिक्री निष्पादन में सक्षम नहीं है तथा जो वर्तमान हो और अवधि (मियाद) कानून के द्वारा वर्जित न हों। प्रथम स्तर के न्यायालय के द्वारा पारित डिक्री निष्पादन होने के लिए एक डिक्री है जब तक कि वह उच्च न्यायालय द्वारा पारित डिक्री में मिला न दी गई हो। (A.I.R. 1974 **उड़ीसा** 34)

निष्पादन के लिए कौन आवेदन कर सकेगा- निष्पादन हेतु आवेदन हमेशा डिक्रीधारी द्वारा ही किया जाना चाहिए। संयुक्त डिक्री के केस में सभी डिक्रीधारी निष्पादन में सम्मिलित किए जाने चाहिए।

अंतरण के केस में आवेदन इस आदेश के नियम 16 के अंतर्गत अंतरिती द्वारा भी किया जा सकता है। लेकिन नियम 15 उपबंध करता है कि अगर डिक्री एक से ज्यादा व्यक्तियों के पक्ष में पारित की गई है तो उनमें से कोई एक सबके फायदे हेतु संपूर्ण डिक्री के निष्पादन के लिए आवेदन कर सकेगा। लेकिन संयुक्त डिक्रीधारियों में से किसी एक द्वारा मात्र अपने हिस्से के निष्पादन के लिए आवेदन ग्रहण नहीं किया जाएगा। (A.I.R. 1958 पटना 228)। डिक्रीधारी की मृत्यु होने पर उसका विधिक प्रतिनिधि निष्पादन के लिए आवेदन कर सकेगा।

किसके खिलाफ आवेदन किया जा सकता है? अगर निर्णीत-ऋणी जीवित है तो उसके खिलाफ आवेदन किया जाएगा तथा अगर वह मर गया है तो आवेदन उसके वैध प्रतिनिधि के खिलाफ किया जाएगा। परवर्ती मामले में डिक्री का निष्पादन वैध प्रतिनिधि के शरीर के खिलाफ नहीं किया जा सकता, वरन् निर्णीत ऋणी की संपत्ति जो कि वैध प्रतिनिधि के हाथ में आई है तथा उचित रूप से उसके द्वारा निकाली नहीं गई है, के विरुद्ध किया जाएगा।

प्रश्न: प्रतिसादन किसे कहते हैं. अर्थ बताते हुए प्रकार बताइये।

उत्तर:- प्रतिसादन का शाब्दिक अर्थ है एक-एक दूसरे के विरुद्ध किया गया दावा। इन ऋणों की पारस्परिक विमुक्ति कहते हैं यह बचाव व प्रतिदावा दोनों का मिश्रण है

प्रतिसादन के प्रकार:-

1) वैध प्रतिसादन 2) सामयिक प्रतिसादन

वैध प्रतिमाधन :- जो वादी के विरुद्ध अपना दावा रखने की अनुमा देता है

साम्यिक प्रतिसादन – राशि अनिश्चित होने की स्थिति मे साम्यिक प्रतिमादन की अनुमति दी जाती है।

वैध एवम् सामयिक प्रति मादन मे अंतर

(1) वैध प्रतिसादन में धनराशि निश्चित होती है. सामयिक प्रतिनाधन मे राशि अनिश्चित होती है।

(2) वैद प्रतिमादन में दावे एक ही संव्यवहार मे पैदा हो यह जरूरी नहीं। किन्तु सामयिक प्रतिसादन मे जरूरी है।

(3) वैध प्रतिमाधन को ग्रहण करने हेतु न्याय। निर्णयन हेतु न्यायालय बाध्य है। साम्यिक प्रतिमादन में न्यायालय बाध्य नहीं होता

(4) वैध प्रतिमाधन मे राशि वैद्य रूप मे वसूली जाय यह आवश्यक नही किन्तु साम्यिक प्रतिमाधन में वसूल की गई राशि वैध रूप से वसूली जाए।

आज्ञप्तियाँ

प्रश्न # डिक्री अथवा आज्ञाप्ति की परिभाषा दीजिए। डिक्री के आवश्यक तत्वों को बताइए। डिक्री और आदेश में भेद स्पष्ट कीजिए।

उत्तर-

आज्ञप्ति

संहिता की धारा 2 (2) में आज्ञप्ति को निम्न तरह से परिभाषित किया गया है- "आज्ञप्ति का तात्पर्य न्याय निर्णय की वह औपचारिक अभिव्यक्ति है जो कि जहां तक इस अभिव्यक्ति को करने वाले न्यायालय का संबंध है, विवादास्पद वाद से संबंधित समस्त या किसी एक विषय के संबंध में पक्षकारों के अधिकारों को निश्चयात्मक रूप में निर्धारित करती है तथा वह या तो प्रारंभिक हो सकेगी या अंतिम। यह वाद-पत्र को अस्वीकृत तथा धारा 47 या धारा 144 के अंतर्गत किसी प्रश्न के निश्चय को समाविष्ट करती हुई समझी जाएगी, पर यह अग्रलिखित को समाविष्ट नहीं करेगी- (i) कोई अन्य निर्णय जिसकी अपील ऐसे हो सकती है जैसे एक आदेश की अपील, या (ii) चूक हेतु खारिज करने का कोई आदेश।

स्पष्टीकरण- एक आज्ञप्ति प्रारंभिक है जबकि इसके पहले के वाद पूर्णरूपेण निपटा दिए जाएं तथा और भी कार्यवाहियां की जानी हों। यह अंतिम जब होती है तब ऐसा न्याय निर्णय वाद को पूर्णरूपेण निपटाता है। यह अंशतः प्रारंभिक तथा अंतिम भी हो सकती है।

साक्ष्य तथा प्रमाण के अभाव में वाद को खारिज करने का निर्णय सभी विवादित विषयों को निपटाता है और यह एक आज्ञप्ति है। (आ. इ. रि. 1957, इलाहाबाद 107) किसी वाद-प्रत्र को निरस्त किए जाने का आदेश व्यवहार प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत आज्ञप्ति की श्रेणी में आता है। (आई.एल.आर. 16 मद्रास 285) एक वाद-पत्र की अस्वीकृति संहिता की धारा 96 के अधीन अपील-योग्य एक आज्ञप्ति समझी जाती है। (ए. आई. आर. 1957 कर्नाटक 82)

आज्ञप्ति के लक्षण

एक आज्ञप्ति के निम्न लक्षण होते हैं-

(1) एक न्याय निर्णय की औपचारिक अभिव्यक्ति जरूरी है जैसे वाद-पत्र में इच्छित एक अनुतोष की स्वीकृति या अस्वीकृति और न्याय न्यायालय की एक औपचारिक घोषणा में समाविष्ट होना आज्ञप्ति के आकार की सभी जरूरतें पूरी होनी चाहिए। निर्णय के आदेश जैसे वर्णन मात्र से वह एक आज्ञप्ति होने हेतु आदेश नहीं हो सकती।

(2) वह न्याय निर्णय न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत वाद में दिया जाना चाहिए। जब तक कोई वाद न हो, तब तक कोई आज्ञप्ति नहीं हो सकती।

(3) आज्ञप्ति वाद का तार्किक निष्कर्ष है और वह अपने साथ मुकदमेबाजी का फल वहन करती है।

(4) यह न्याय निर्णय वाद में विवादित समस्त और किसी एक विषय के संबंध में पक्षकारों के अधिकारों का निर्णय करने में जरूरी रूप से दिया गया हो। पक्षकारों के अधिकारों का संकेत यहां पक्षकारों के मौखिक या सारवान अधिकार की तरफ है। यह मौलिक अधिकार हैसियत, क्षेत्राधिकार, मियाद, वाद के आकार, लेखा इत्यादि सामान्य अधिकारों को समाविष्ट करते हैं।

(5) ऐसे न्याय निर्णय को निश्चायक होना चाहिए अर्थात निर्णय देने वाले न्यायालय के संदर्भ में वह निर्णय पूर्ण तथा अंतिम होना चाहिए।

आज्ञप्ति के आवश्यक तत्व

किसी आज्ञप्ति के निर्णय में निम्न शर्तें होनी चाहिए-

(1) वह निर्णय एक वाद में अभिव्यक्त हो।

(2) वह निर्णय वाद के समस्त या किसी विवादित विषय से संबंधित पक्षकारों के अधिकारों पर हो।

(3) वह निर्णय ऐसा हो जो पक्षकारों के अधिकारों को निश्चयात्मक ढंग से निर्धारित करे।

(4) वह निर्णय एक न्याय निर्णय की औपचारिक अभिव्यक्ति के रूप में जरूरी रूप से दिया गया हो।

(5) ऐसे न्याय निर्णय का किसी सिविल या राजस्व न्यायालय द्वारा होना जरूरी है।

अनुज्ञप्तियाँ

प्रश्न # अनुज्ञप्ति के आवश्यक तत्व क्या है? अनुज्ञप्ति किस प्रकार की जाती है।

उत्तर-

अनुज्ञप्ति का अर्थ

अनुज्ञप्ति अथवा लाईसैंस का अर्थ किसी सम्पत्ति के स्वामी की वह स्वीकृति है जिसके आधार पर कोई व्यक्ति उसकी अचल सम्पत्ति पर प्रवेश करके कोई अधिकृत कार्य कर सकता है तथा वैसा कार्य करना उस स्वीकृति के अभाव में अतिक्रमण होता है। भारतीय सुखाधिकार अधिनियम की धारा 52 में अनुज्ञप्ति अथवा लाइसेंस की परिभाषा इस तरह दी गई है कि जहाँ एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अथवा अन्य व्यक्तियों की किसी निश्चित संख्या को अपनी अचल सम्पत्ति में या उस पर कुछ ऐसी चीज करने या करते रहने का अधिकार प्रदान करता है जो उक्त अधिकार की अनुपस्थिति में अवैध होता है तथा ऐसा अधिकार किसी सुखाधिकार या उक्त सम्पत्ति में किसी हित के बराबर नहीं होता तो वह अधिकार अनुज्ञप्ति कहलाता है।

लाइसेंस की उस सम्पत्ति से कोई सम्बद्धता (Annexation) नहीं होती जिसके सम्बन्ध में इसका उपभोग होता है। वह असल में एक व्यक्ति अधिकार (Personal Right) होता है जो कि न तो अन्तरित किया जा सकता है तथा न दाय योग्य (Heritable) ही होता है। लाइसैंस का उस सम्पत्ति पर कोई स्वत्व (Title) अथवा हित (Interest) नहीं होता और न ही वह उस सम्पत्ति पर कब्जा पाने के लिए वाद ही दायर कर सकता है।

अनुज्ञप्ति के प्रकार

धरा 54 के अनुसार अनुज्ञप्ति निम्नलिखित प्रकार से दी जा सकती है-

(1) **अभिव्यक्ति अथवा प्रकट अनुदान-** जब किसी भूमि के संबंध में प्रकट रूप तथा स्पष्ट शब्दों में अनुज्ञप्ति दी जा सकती है तो उसे अभिव्यक्ति अथवा प्रत्यक्ष अनुदान द्वारा स्वीकृत अनुज्ञप्ति कहा जाता है। सामान्यत: जिस किसी भूमि के लिए सुखाधिकार पैदा किया जा सकता है उसके प्रति अनुज्ञप्ति भी जारी की जा सकती है। जैसे- अगर किसी रेलवे कंपनी द्वारा उसके प्रयोग तथा कार्यों के लिए ली गई भूमि से होकर किसी व्यक्ति को रास्ते का सुखाधिकार दिया जाता है तो वह गलत होगा क्योंकि वह उद्देश्य के विपरीत है। लेकिन यदि अनुदान प्राप्तकर्ता ने उस अनुदान के अनुसार रास्ते का अधिकार प्रयोग किया हो तो वह अनुज्ञप्ति कहलाता है।

(2) **लक्षित या निहित अनुदान द्वारा-** जब किसी अनुज्ञप्ति में प्रदान किए जाने का निष्कर्ष पक्षों के आचरण से निकल जाए तो वह निहित अनुदान द्वारा कहलाती है। उदाहरण हेतु 'क' ने मकान की दूसरी मंजिल पर एक दीवार इस प्रकार खड़ी की कि वह पड़ौसी 'ख' की निचली दीवार पर आधारित हो गई। 'ख' को इस बात की जानकारी थी परंतु उसने विरोध नहीं किया। परिणामस्वरूप उस दीवार के सहारे से स्थायी प्रकृति का भवन निर्माण हो गया। इस मामले में 'ख' की खामोशी का अर्थ निहित या लक्षित रूप से 'क' को अनुज्ञप्ति प्रदान किया जाना है। लाइसैंस की स्वीकृति किए जाने की कोई विशेष निर्धारित प्रक्रिया नहीं है तथा न ही उसका पंजीकृत होना ही जरूरी होता है।

लाइसैंस या अनुज्ञप्ति निम्न दो तरह से प्रदान की जां सकती है-

(1) अभिव्यक्त रूप से । (2) निहित या विवक्षित रूप से।

अनुज्ञप्ति के मुख्य लक्षण

अनुज्ञप्ति के निम्न प्रमुख लक्षण हैं-

(1) यह सिर्फ स्वीकृति प्रदान किये जाने से पैदा होती है।

(2) यह व्यक्तिगत सुखाधिकार है जिसका सम्पत्ति के स्वामित्व से कोई सम्बन्ध नहीं।

(3) जिस सम्पत्ति के सम्बन्ध में अनुज्ञप्ति दी जाती है उसमें अनुज्ञप्ति धारक का कोई हित पैदा नहीं होता।

(4) यह अहस्तान्तरणीय तथा अदाय योग्य (non-heritable) होता है।

(5) यह निरोधात्मक अधिकार न होकर एक सकारात्मक अधिकार (positive right) है। अनुज्ञप्ति या लाइसैंस सिर्फ निश्चित संख्या के लोगों को ही दिया जा सकता है न व्यक्तियों के बदलते हुए समूह को।

असल में लाइसैंस भूमि में कोई हित पैदा नहीं करता क्योंकि वह कोई कार्य करने के लिए दिया जाता है जो कि उक्त लाइसैंस के अभाव में अवैध होता है। अत: वह प्रदानकर्त्ता और प्राप्तकर्त्ता के बीच एक व्यक्तिगत मामला है।

पट्टे की परिभाषा

पट्टा की परिभाषा — इस शब्द का प्रयोग अचल संपत्ति हेतु किया जाता है. अचल संपत्ति का वास्तविक स्वामित्व व नियंत्रण उसके वास्तविक स्वामी ~~घर~~ का ही होता है किंतु यदि वह अपना स्वामित्व किसी दूसरे को प्राप्त हो और वास्तविक स्वामी को अलग कर दिया जाए

भारतीय संपत्ति अन्तरण अधिनियम की धारा 105 के मुताबिक किसी अचल संपत्ति का पट्टा उसके उपभोग के अधिकार का अधिकार कोई अन्य प्राप्त कर ले उसे पट्टा कहा जाता है

पट्टे हेतु आवश्यक तत्व

(1) पक्ष — दो पक्ष — पट्टाकर्ता + पट्टाधारी

(2) अचल संपत्ति — ये केवल अचल संपत्ति का ही होता है।

(3) अन्तरण — अचल संपत्ति का स्वामी सारे अधिकारों का अन्तरण नहीं करता बल्कि अपने ~~अपने~~ अधिकारों का ~~आंशिक~~ आंशिक अन्तरण करता है।

(4) अवधि और शर्तें :— पट्टा निश्चित अवधि का होता है.

(5) प्रतिफल — इसके लिए 135 धारा अधिनियम बड़ा व्यापक है। अधिमूल्य के रूप में दिया जाने वाला धन

वसीयत

वसीयत (इच्छापत्र)

प्रश्न # इच्छा-पत्र की परिभाषा लिखिए। इच्छापत्र से संबंधित विधि का वर्णन कीजिए।

उत्तर-

इच्छापत्र का अर्थ

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 2 (अ) में इच्छापत्र की परिभाषा निम्न तरह से दी गई है- "इच्छापत्र उसके कर्ता द्वारा अपनी संपत्ति के संबंध में उसके अभिप्रायों की वह घोषणा है जिसे वह अपनी मृत्यु के पश्चात् प्रभावी करना चाहता हो।"

इस तरह इच्छापत्र उसके निष्पादनकर्ता के उन विचारों का संग्रह है जिसके अनुसार वह अपनी समस्त या किन्हीं चल तथा अचल संपत्ति के विषय में अपनी मृत्यु के पश्चात् व्यवस्था करता है। इच्छापत्र करने वाला इच्छापत्रकर्ता कहलाता है। इच्छापत्रकर्ता अपनी मृत्यु के पश्चात् जिस व्यक्ति या व्यक्तियों से इच्छापत्र में दी हुई व्यवस्थाओं का संचालन करने के लिए नामांकित करता है उसे रिक्थदान कहते हैं। जिस व्यक्ति का मृतक की संपत्ति में इच्छापत्र द्वारा कोई हित घोषित होता है उसे इच्छापत्रधारी कहते हैं तथा जो हित दिया जाता है उसे निष्पादन कहते हैं, जिसे इच्छापत्र के अंतर्गत कोई लाभ पहुंचाता है उसे हितग्राही कहते हैं। अगर इच्छापत्र में इच्छापत्रकर्ता कोई निष्पादिक नहीं नामांकित करता तो न्यायालय किसी व्यक्ति को विधि के अनुसार इच्छापत्रकर्ता की संपत्ति का प्रशासक नियुक्त करता है। प्रशासक को जिस लेख द्वारा प्रशासन के अधिकार न्यायालय द्वारा दिये जाते हैं उसे प्रशासन-पत्र कहते हैं।

इच्छापत्र कौन कर सकता है ?

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के अनुसार कोई भी भारतीय नागरिक स्वेच्छा से अपनी इच्छापत्र लिख सकते हैं। किन्तु-

1. इच्छापत्र स्वयं लिखा हो या लिखाया गया हो,
2. इच्छापत्र पर इच्छापत्रकर्ता ने स्वयं हस्ताक्षर किये हों अथवा अपनी स्वीकृति से अपनी ओर से किसी दूसरे से हस्ताक्षर कराये हों, तथा
3. इच्छापत्र की लिखत और इच्छापत्रकर्ता के हस्ताक्षर के प्रमाण में कम से कम दो साक्षियों के हस्ताक्षर हों,

इच्छापत्र पर कोई भी स्टाम्प नहीं लगता तथा इसकी रजिस्ट्री भी अनिवार्य नहीं है सिर्फ उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 53 व 55 के अंतर्गत उसका अभिप्रमाणन कम से कम 2 गवाहों के समक्ष आवश्यक है।

इच्छापत्र का संशोधन एवं विखंडन

किसी भी इच्छापत्र में संशोधन उसी प्रकार से होता है जिस प्रकार से किसी भी इच्छापत्र का निष्पादन होता है।

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम की धारा 71 के अनुसार किसी भी इच्छा-पत्र में इसके निष्पादक के अनुरूप ही अगर कोई संशोधन किया जाता है तो वह मान्य होती है।

शमनीय तथा अशमनीय

प्रश्न # शमनीय तथा अशमनीय अपराध पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर- शमनीय तथा अशमनीय अपराध- दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2 में शमनीय तथा अशमनीय अपराध परिभाषित नहीं किया गया है, परन्तु धारा 320 की सारणी में उन अपराधों का उल्लेख है, जो परिवादकर्त्ता और अभियुक्त के समझौते के आधार पर शमन किये जा सकते हैं। शमनीय अपराध वह अपराध है, जिसकी प्रकृति साधारण होती है और जिसका सम्बन्ध

संज्ञेय तथा असंज्ञेय

प्रश्न # संज्ञेय तथा असंज्ञेय अपराध के बारे में लिखो।

उत्तर-

संज्ञेय एवं असंज्ञेय अपराध

संहिता की धारा 2 (ग) के मुताबिक-संज्ञेय अपराध से ऐसा अपराध अभिप्रेत है जिसके लिए तथा संज्ञेय मामला से ऐसा मामला अभिप्रेत है जिसमें, पुलिस अधिकारी प्रथम अनुसूची के अथवा तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अनुसार वारंट के बिना गिरफ्तार कर सकता है।

दंड प्रक्रिया संहिता ने अपनी प्रथम अनुसूची में यह स्पष्ट किया है कि कौन से संज्ञेय अपराध हैं तथा कौन से संज्ञेय अपराध नहीं हैं। अपराध की जांच यथासंभव शीघ्रता से की जानी चाहिए। संज्ञेय अपराध साधारणतया गंभीर अपराध होते हैं और एक पुलिस अधिकारी अभियुक्त व्यक्ति को बिना वारंट के गिरफ्तार कर सकता है तथा मामले की जांच के लिए अनुमति प्राप्त करता है।

धारा 2 (ग) में निर्देशित गिरफ्तारी की शक्ति शर्तहीन शक्ति होनी चाहिए शर्तयुक्त शक्ति नहीं। एक अपराध संज्ञेय तब होता है जब भले ही अपराधी सिर्फ किसी विशिष्ट श्रेणी के पुलिस अधिकारी द्वारा बिना वारंट के गिरफ्तार किया जा सकता है। क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 161 के अंतर्गत एक अपराध भ्रष्टाचार निरोध अधिनियम, 1874 की धारा 3 के अंतर्गत संज्ञेय है, इसी तरह भारतीय दंड संहिता की धारा 161, धारा 116 के साथ पठित होकर संज्ञेय होना चाहिए। प्राय: वे समस्त अपराध जो कि एक लोकसेवक द्वारा कारित कहे जाते हैं उन्हें धारा (ए) एवं (सी) के अंतर्गत आना चाहिए।

	संज्ञेय अपराध		असंज्ञेय अपराध
1.	संज्ञेय अपराध गंभीर तथा संगीन प्रकृति के होते हैं।	1.	असंज्ञेय अपराध सामान्य प्रकृति के होते हैं।
2.	संज्ञेय मामलों में पुलिस अभियुक्त को बिना वारंट के गिरफ्तार करती है।	2.	असंज्ञेय अपराध में पुलिए बिना वारंट के गिरफ्तार नहीं कर सकती है।
3.	पुलिस अधिकारी बिना किसी आदेश के अन्वेषण प्रारंभ कर सकता है।	3.	असंज्ञेय अपराध में बिना आदेश के अन्वेषण प्रारंभ नहीं कर सकता है।
4.	संज्ञेय मामलों में कार्यवाही के लिए परिवाद की आवश्यकता नहीं है।	4.	असंज्ञेय मामलों में कार्यवाही का प्रारंभ परिवाद से होता है।

Unit - 3 III

प्रश्न # निर्णय क्या है? कब और किस प्रकार निर्णय सुनाया और हस्ताक्षरित किया जाता है? किसी निर्णय में क्या-क्या शामिल होना चाहिए?

उत्तर-

निर्णय

निर्णय से हमारा तात्पर्य ऐसे कथन से है जो कि न्यायाधीश ने आज्ञप्ति या आदेश के आधारों पर दिया है "Judgement means the statement given by the judge of the grounds of a decree or order."

दीवानी कार्य विधि संहिता की धारा 33 उपबंधित करती है कि "न्यायालय मामले की सुनवाई के बाद निर्णय सुनाएगा।" (धारा 33)

असल में निर्णय डिक्री वाद का निचोड़ है क्योंकि वाद की सुनवाई के अंत में न्यायालय को निर्णय सुनाना पड़ता है। इसलिए निर्णय तथा डिक्री या न्यायिक प्रक्रिया में उतना ही महत्व है जितना कि अभिवचन का।

निर्णय कब सुनाया जाएगा

आदेश 20 नियम 1 के अनुसार-

(1) न्यायालय मामले के सुन लिए जाने के बाद निर्णय खुले न्यायालय में या तो तुरंत बाद यथासाध्य शीघ्र भविष्यवर्ती किसी दिन को सुनाएगा, तब न्यायालय उस प्रयोजन के लिए कोई तारीख निश्चित करेगा जिसकी सम्यक सूचना पक्षकारों या उसके अभिवक्ताओं को दी जाएगी। लेकिन जहां निर्णय तत्काल नहीं सुनाया गया है, वहां न्यायालय द्वारा निर्णय उस तारीख से, जिसकी मामले की सुनवाई खत्म हुई थी पंद्रह दिनों के भीतर सुनाने का पूरा प्रयत्न किया जाएगा। लेकिन जहां ऐसा करना साध्य नहीं है वहां न्यायालय निर्णय सुनाने हेतु भविष्य में एक दिन नियत करेगा तथा ऐसा दिन साधारणतः उस तारीख से, जिसको मामले की सुनवाई हुई थी तीस दिनों के पश्चात होगा तथा इस तरह किए गए दिन की सम्यक् सूचना पक्षकारों या उनके अभिवक्ताओं को दी जाएगी।

लेकिन यह और कि जहां निर्णय उस तारीख से, जिसको मामले की सुनवाई खत्म हुई थी, तीन दिनों के अंदर नहीं सुनाया जाता है, वहां न्यायालय ऐसे विलंब के कारणों को अभिलिखित करेगा तथा भविष्य में यह दिन नियत करेगा जब निर्णय सुनाया जाएगा तथा इस तरह नियत किए गए दिन की सम्यक् सूचना पक्षकारों या उनके अभिवक्ताओं को दी जाएगी।"

(2) "जहां कि लिखित निर्णय सुनाया जाता है, वहां अगर हर वाद पद पर न्यायालयों के निष्कर्षों को और मामले में पारित अंतिम आदेश को पढ़ दिया जाता है तो वह पर्याप्त होगा तथा न्यायालय के लिए जरूरी नहीं होगा कि वह संपूर्ण निर्णय को पढ़े पर संपूर्ण निर्णय की एक प्रति निर्णय सुनाए जाने के तुरंत बाद पक्षकारों या अभिवक्ताओं को दी जाएगी।"

(3) "निर्णय खुले न्यायालय में आशुलिपिक को बोलकर लिखाते हुए उस दशा में सुनाया जा सकेगा जिसमें न्यायाधीश उच्च न्यायालय द्वारा इस निमित्त विशेष रूप से सशक्त किया गया हो।" लेकिन जहां निर्णय खुले न्यायालय में बोलकर लिखाते हुए सुनाया जाता है, वहां इस तरह सुनाए गए निर्णय को अनुलिपि उसमें ऐसी शुद्धियां करने के बाद जो जरूरी हों, न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षरित की जाएगी, उस पर वह तारीख लिखी जाएगी जिसको निर्णय सुनाया गया था तथा वह अभिलेख का भाग होगी।" (आ.20 नि.1)

न्यायाधीश ऐसे निर्णय को सुना सकता है जो उसके पूर्ववर्ती न्यायाधीश द्वारा लिखा गया हो पर सुनाया न गया हो। (आ. 20 नि.2)

प्रश्न. 1 निर्णय लेखन के सिद्धान्त ।

उत्तर. 1. मध्य प्रदेश सिविल न्यायालय:—

अधिनियम के अनुसार:-

नियम 152:- निर्णय फुल स्क्रेप कागज पर प्रत्येक पन्ने के सामने बायें और पीछे दाहिनी ओर पन्ने का एक तिहाई का हिस्सा छोड़ा जाना चाहिए । निर्णय पैराग्राफ मे विभाजित होना चाहिए । प्रत्येक पेज पर न्यायाधीश के हस्ताक्षर होना चाहिए ।

नियम 153:- न्यायाधीश द्वारा निर्णय खुले न्यायालय में दिनांकित व हस्ताक्षरित किए जाए ।

नियम 154:- प्रत्येक पक्ष के मामले को संक्षिप्त में दिया जाना चाहिये और उसको उसी रूप से वर्णित किया जाना चाहिए कि वादी ने क्या कहा है और प्रतिवादी ने उसका क्या उत्तर दिया है ।

स्पष्ट और निर्विवाद बिन्दुओं पर परिश्रम नहीं किया जाना चाहिए । वंश वृक्ष को यथा संभव स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया जाना चाहिए और व्यक्तियों के नाम और परिचय वाद में उसके सम्बन्धों के वर्णन हेतु आवश्यक हो तो उनके सम्बन्धों को स्पष्ट रूप से और उनका वाद से क्या सम्बन्ध है विशेष ध्यान रखना चाहिये ।

निर्णय लिखते समय न्यायाधीश के मस्तिष्क में यह स्पष्ट हो कि किन बिन्दुओं को निर्णीत करना है ।

नियम 156:- मूल वाद में परीक्षण के पश्चात निर्णय के आदेशात्मक भाग में स्वीकृत सहायताओं का उल्लेख किया जाना चाहिये ।

नियम 157:- निर्णय में स्पष्ट रूप से व्यक्त किया जाना चाहिए कि क्या ब्याज मात्र डिक्री के अधीन वसूल किये जाने वाले धन पर लगाया जाना है ।

नियम 158:- निर्णय यथा शीघ लिखा एवं सुनाया जाना चाहिये । निर्णय पर हस्ताक्षर के नीचे न्यायाधीश का पूर्ण व सही पदनाम होना चाहिए ।

प्रश्न. 2 निर्णय एवं विनिश्चय ।

उत्तर. 1. निर्णय [Judgement]:— आपराधिक मामलों में "हाल्सबरी लॉज ऑफ इंग्लैण्ड" के अनुसार निर्णय शब्द का अर्थ एक ऐसे आदेश से है जो विचारण पूर्ण होने पर अभियुक्त की दोषसिद्ध या दोष मुक्ति घोषित करता हैं ।

"हार्टन के शब्दकोष के अनुसार":- निर्णय का सामान्य अर्थ है किसी न्यायालय द्वारा दिया गया अवधारणा या विनिश्चय । यह विनिश्चय सिविल अथवा अपराधिक किसी भी प्रकार के वाद में पक्षकारों के अधिकारों अथवा मजिस्ट्रेट में हो सकता है । न्यायाधीशों अथवा मजिस्ट्रेट द्वारा किसी मामले में साक्ष्य या तर्को को खोलने के उपरान्त कारण सहित दी गई राय की अभिव्यक्ति को निर्णय करते हैं ।

सी.पी.सी. की धारा 2(9) के अनुसार निर्णय से अभिप्राय एक आज्ञप्ति अथवा आदेश के आधारों पर न्यायाधीश द्वारा दिये गए कथन से है । दूसरे शब्दों में आज्ञप्ति अथवा आदेश निर्णय का संक्षिप्त रूप हैं ।

C.R.P.C. 1973 की धारा 354 (1) B:— के अनुसार निर्णय से अवधारणा के बिन्दु पर विनिश्चय और विनिश्चय के कारण अन्तर्विष्ट होने चाहिए ।

व्यक्ति बंधी निर्णय:- जो सम्बन्धित मामले में पक्षकारों पर लागू होते हैं ।

सर्वबन्धी निर्णय:- इसमें वादी के अधिकार सम्पूर्ण विश्व के विरुद्ध घोषित होते हैं जैसे:- दिवालिया या प्रोबेट सम्बन्धी मामले ।

प्रश्न. 4 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत निर्णय के बारे में लिखों ।

उत्तर. धारा 353:– निर्णय (1) आरम्भिक अधिकारिता के दण्ड में न्यायालय में होने वाले प्रत्येक विचारण में निर्णय पीठासीन अधिकारी द्वारा खुले न्यायालय में या तो विचारण के खत्म होने के पश्चात्, या तुरंत या बाद में किसी समय, जिसकी सूचना पक्षकारों या उनके प्लडरों को दी जाएगी.

(क) सम्पूर्ण निर्णय देकर सुनाया जाएगा; या

(ख) सम्पूर्ण निर्णय पढ़कर सुनाया जायेगा; या

(ग) अभियुक्त या उसके प्लीडर द्वारा समझी जाने वाली भाषा में निर्णय का प्रवर्तनशील भाग पढ़कर और निर्णय का सार समझाकर सुनाया जायेगा ।

(क) सम्पूर्ण निर्णय देकर सुनाया जाएगा, अथवा (ख) सम्पूर्ण निर्णय पढ़कर सुनाया जाएगा, अथवा (ग) अभियुक्त अथवा उसके प्लीडर द्वारा समझी जाने वाली भाषा में निर्णय का प्रवर्तनशील भाग पढ़कर और निर्णय का सार समझाकर सुनाया जाएगा ।

जहाँ उपधारा (1) के खण्ड (क) के अधीन निर्णय दिया जाता है वहां पीठासीन अधिकारी उसे आशुलिपि में लिखावाएगा तथा जैसे ही अनुलिपि तैयार हो जाती है वैसे ही खुले न्यायालय में उस पर और उसके हाथ पृष्ठ पर हस्ताक्षर करेगा तथा उस पर निर्णय दिये जाने की तारीख डालेगा । (क्वीन एम्प्रेस बनाम हरगोविंद सिंह, I.LR.14, All 242)

जहाँ निर्णय अथवा उसका प्रर्वतनशील भाग यथास्थिति उपधारा (1) क खण्ड (ख) या खण्ड (ग) के अन्तर्गत पढ़कर सुनाया जाता है वहां पीठासीन द्वारा खुले न्यायालय में उस पर तारीख डाली जाएगी तथा हस्ताक्षर किए जाएंगे तथा अगर वह उसके द्वारा स्वयं अपने हाथ से नहीं लिखा गया है तो निर्णय के प्रत्येक पृष्ठ पर उसके द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे ।

जहाँ निर्णय उपधारा (1) के खण्ड (ग) में विनिर्दिष्ट सूची से सुनाया जाता है, वहां पूरा निर्णय या उसकी एक प्रतिलिपि पक्षकारों या उनके प्लीडारों के परिशीलन हेतु तुरन्त निःशुल्क उपलब्ध कराई जाएगी ।

अगर अभियुक्त अभिरक्षा में है तो निर्णय सुनाने के लिए उसे लाया जाएगा ।

अगर अभियुक्त अभिरक्षा में नहीं है, तो उससे न्यायालय द्वारा सुनाए जाने वाले निर्णय को सुनने हेतु हाजिर होने की अपेक्षा की जाएगी, पर उस दशा में नहीं की जाएगी जिसमें विचारण के दौरान उसकी वैयक्तिक हाजिरी से उसे अभियुक्ति दे दी गई हो तथा दंडादेश सिर्फ जुर्माने का हो या दोषमुक्त किया गया हो । लेकिन जहाँ एक से ज्यादा अभियुक्त हो तथा उनमें से एक या एक से ज्यादा उस तारीख को न्यायालय में हाजिर नहीं है जिनकों निर्णय सुनाया जाने वाला है तो पीठासीन अधिकारी उस मामले को निपटाने में अनुचित विलंब से बचने हेतु उनकी अनुपस्थिति में भी निर्णय सुना सकता है ।

किसी भी दण्ड न्यायालय द्वारा सुनाया गया कोई निर्णय सिर्फ इस कारण विधिवत सामान्य न समझा जाएगा कि उसके सुनाए जाने के लिए सूचित दिन को या स्थान में कोई पक्षकार अथवा उसका प्लीडर अनुपस्थित था या पक्षकारों पर या उनके प्लीडरों पर या उनमें से किसी पर ऐसे दिन या स्थान की सूचना की तामील करने में करेई लोप या त्रुटि हुई थी ।

Unit · 4.

अपराधविधि

प्रश्न # **दंड प्रक्रिया संहिता 1973 पर टिप्पणी लिखिए।**

उत्तर- **दंड प्रक्रिया संहिता का विकास-** भारत में प्रथम बार सन् 1898 में व्यवस्थित रूप से दंड प्रक्रिया संहिता का निर्माण किया गया। यह जम्मू-कश्मीर, नागालैंड तथा असम के जनजाति-क्षेत्रों को छोड़कर समस्त भारत पर प्रयोज्य थी। इस संहिता में भी समय-समय पर केन्द्रीय तथा राज्य-विधायिकाओं द्वारा पारित विभिन्न अधिनियमों द्वारा संशोधन किये गये। इनमें केन्द्रीय विधायिका द्वारा सन् 1923 तथा 1955 में किये गये संशोधन महत्वपूर्ण हैं। सन् 1955 में संहिता में किये गये संशोधन बहुत विस्तृत तथा प्रक्रिया को सरल बनाने तथा यथासंभव शीघ्र विचारण की व्यवस्था करने वाले थे। इनके अलावा राज्य-विधायिकाओं द्वारा भी स्थानीय संशोधन किये गये जिनका प्रमुख उद्देश्य न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक करना था, जैसा कि संविधान के अध्याय चार में राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांतों के अंतर्गत उपबंध किया गया है। पर इन संशोधनों के बाद भी सन् 1898 की दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधान व्यावहारिक रूप से अपरिवर्तनीय ही रहे। सन् 1955 में प्रथम विधि-आयोग की स्थापना तक इनमें महत्वपूर्ण परिवर्तन करने के कोई प्रयत्न नहीं किये गये।

सन् 1955 में प्रथम विधि-आयोग नियुक्त किया गया तथा उसे सिविल और आपराधिक विधि के न्याय-प्रशासन के सुधार के संबंध में प्रतिवेदन पेश करने का कार्य सौंपा गया। सन् 1955 में आयोग ने सिविल तथा आपराधिक न्याय-प्रशासन में सुधार के संबंध में अपना 14वाँ प्रतिवेदन पेश किया। हालांकि इसमें दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों में संशोधन करने हेतु कई सुझाव दिये गये थे, पर ये पूर्ण नहीं थे; अतः एक बार पुनः आयोग को यह कार्य सौंपा गया। इस बार आयोग ने संपूर्ण दंड प्रक्रिया संहिता की परीक्षा की तथा उसके पुनरीक्षण

नई संहिता की विशेषतायें- नई संहिता को पुरानी संहिता की बजाय कुछ संक्षिप्त बनाया गया है जिसमें 565 धाराओं के स्थान पर 484 धाराओं को स्थान दिया गया है। नई संहिता की अपनी कतिपय विशेषतायें हैं जो निम्न हैं-

(1) *नई संहिता की प्रथम तथा मुख्य विशेषता न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक करना रहा है। इस तरह मजिस्ट्रेट के कार्यों को न्यायिक तथा कार्यपालकीय मजिस्ट्रेट के बीच विभाजित कर दिया गया है।*

(2) *आपराधिक मामलों में आरोप पत्र पुलिस द्वारा न्यायालय में 60 दिन में पेश करना होता है तथा ऐसा नहीं किये जाने पर अभियुक्त को जमानत पर छोड़ दिये जाने का प्रावधान किया गया है।*

(3) *विचारण के दौरान कारावास में व्यतीत हुए समय को न्यायालय द्वारा दिये गये कारावास के दंड में से कम कर दिया गया है।*

(4) *किसी भी व्यक्ति को, चाहे उसे वारंट के द्वारा या वारंट के बगैर गिरफ्तार किया गया हो, गिरफ्तारी के कारणों से अवगत कराया जाना जरूरी है; और अगर वह जमानतीय है तो उसे जमानत पर मुक्त होने के तथ्य से अवगत कराया जाना जरूरी है।*

संवैधानिक विधि / अपराधिक वि

प्रश्न. 1 व्यावहारिक विधि एवं अपराध ।

उत्तर. व्यवहार विधि

विधि:– हेनरी सिडविक के अनुसार ''विधि'' शब्द का प्रयोग किसी सामान्य नियम के लिए किया जा सकता है तो किन्हीं कार्य को करने के लिए या न करने का आदेश व्यक्ति को दण्ड भुगतान पड़े ।

1. व्यवहार विधि:– किसी देश में प्रचलित विधि उस देश में सिविल विधि या नागरिक विधि कहलाती है वह राज्य के न्यायालयों में लागू होतीहै ।

एकरूपता निरन्तरता तथा लोकशासित व्यवहार विधि के प्रमुख लक्षण हैं । इस विधि से समयअनुसार परिवर्तन होते रहते हैं तथा सामाजिक हितों का संरक्षण करना इस विधि का उद्देश्य होता हैं ।

सिविल प्रकृति से तात्पर्य ऐसे वाद से है जिसमें किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के वर्ग के महत्वपूर्ण अधिकारों या दायित्वों के उल्लंघन अथवा प्रवर्तन सम्बन्धी प्रश्न अन्तर्विष्ट हैं ।

दीवानी प्रकृति का वाद वह हैं जिसमें सम्पत्ति संबंधी या पद सम्बन्धी अधिकार या अन्य कोई सिविल अधिकार सम्मिलित हैं । इस प्रकार सिविल प्रकृति से तात्पर्य व्यक्ति के रूप में एक नागरिक से सम्बन्धित अधिकार से हैं, या जाति से । किसी धर्म से अस्था रखने, पूजा करने का अधिकार, किसी जाति मे रहने का अधिकार व्यक्ति के सिविल अधिकार में आते हैं ।

2. आपराधिक विधि:–आपराधिक विधि में विभिन्न अपराधों की परिभाषा दी रहती हैं तथा इसके साथ ही दण्ड के प्रावधानों का भी उल्लेख रहता हैं दण्ड विधि का उद्देश्य आवश्यक रूप से राज्य में शान्ति बनाए रखना हैं । सभी सभ्य समाज में अपराध को समाज के प्रति उपकार माना जाता हैं न कि किसी व्यक्ति विशेष के प्रति इसी कारण अभियुक्त के विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही व्यथित व्यक्ति द्वारा संस्थित की जाने के बजाय राज्य की ओर से दायर की जाती हैं क्योंकि आपराधिक विधि जनसामान्य को प्रभावित करती हैं इसलिये इसे पब्लिक लॉ की श्रेणी में रखा गया हैं ।

प्रश्न. 2 सवैधानिक विधि एवं अपकृत्य ।

उत्तर. 1. संवैधानिक विधि:– यह किसी देश की मूल विधि हैं "**हिवर्ट के अनुसार**" यह सम्प्रभु और उसकी प्रजा–प्रथा सम्प्रभु निकाय के अधीन विभिन्न अंगों की नियंत्रित करने वाले नियमों का समूह हैं ।

विशेषताएँ:–

1. यह देश की मूल विधि हैं जो स्वयं राज्य की संरचना को नियंत्रित करती हैं ।
2. यह देशी की सम्प्रभु विधि हैं इसकी विधि मान्यता को चुनौती नहीं दी जा सकती तथा अन्य विधियां इससे विधि मान्यता प्राप्त करती हैं ।
3. सवैधानिक विधि दो तरह के नियमों से बनती हैं । (1) विधिक नियम जिनके उल्लंघन की स्थिति में उनका न्यायालय से प्रर्वतन कराया जा सकता हैं । (2) गैर विधिक नियम जो सवैधानिक विधि के प्रमुख अंग हैं इसमें संशोधन के लिये विशेष प्रक्रिया अनुसरण आवश्यक हैं ।
4. संविधान के बिना राज्य नहीं हो सकता हैं और राज्य के बिना विधि नहीं हो सकती हैं । अत: संवैधानिक विधि का अस्तित्व विधि से पहले का हैं तथा संविधान का अस्तित्व कुछ परम्परा तथा तथ्यों पर आधारित होता हैं जो बाद में विधि का रूप ग्रहण कर लेते हैं ।

2. अपकृत्य विधि:– अपकृत्य संविदा के पूर्णरुपेण भिन्न एक ऐसा कार्य है जो:–

1. किसी व्यक्ति के पूर्ण अधिकार का अतिक्रमण करना हैं ।
2. किसी व्यक्ति के सापेक्ष्य अधिकार का अतिक्रमण करता हैं और उसे क्षति पहुँचाता हैं ।
3. किसी लोक अधिकार की इस तरह अवहेलना करता हैं जिससे की किसी व्यक्ति की सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा अधिक हानि पहुचाता हैं ।
4. जिसके परिणामस्वरूप वह क्षतिकर्ता के विरुद्ध क्षतिपूर्ति करने के लिये वाद संस्थित करने का अधिकारी हो जाता हैं ।

उत्तर. (अ) संवेधि

संसद एवं राज्य विधानमण्डल दोनों को विधि बनाने की शक्ति प्राप्त है । अनुच्छेद 245 यह उपबन्धित करता है कि इस संविधान के उपबन्धों के अधीन रहते हुए संसद भारत के सम्पूर्ण राज्य क्षेत्र या उसे किसी भाग के लिए विधि बना सकेगी । उसी प्रकार राज्य का विधानमण्डल उस राज्य विधानमण्डल एवं उसके किसी भाग के लिए कानून बना सकेगा । अनुच्छेद 246 एवं सातवीं अनुसूची से यह बात सुस्पष्ट है कि संसद की संघ सूची के विषयों पर विधि बनाने की शक्ति प्राप्त है । इसी प्रकार राज्य को राज्य सूची में विनिर्दिष्ट विषयों पर विधि बनाने का अधिकार है । संघ सूची और समवर्ती सूची में विवाद होने पर संघ सूची अभिभावी होगी तथा राज्य सूची और समवर्ती सूची में विवाद होने पर राज्य सूची अभिभावी होगी । यदि राज्य विधान मण्डल द्वारा बनायी गयी विधियाँ संघ द्वारा बनायी गई विधियों से असंगत है । तो वे उस सीमा का तक शुन्य होंगी जिस सीमा तक असंगत है । जब तक कि राज्य विधानमण्डल राष्ट्रपति की सहमति न प्राप्त कर ले । अवशिष्ट शक्तियां संसद में निहित हैं । भारत में संयुक्त राज्य अमेरिका की भाँति संविधान की सर्वोच्चता पर बल दिया गया है । अत: वे विधियाँ जो संविधान के उपबन्धों से असंगत होगी अधिकारातीत होने के कारण न्यायालयों द्वारा अभिखण्नीय । इस प्रकार भारतीय न्यायालय एवं विधानमण्डल, कार्यपालिकीय के कृत्यों को शून्य घोषित कर सकते हैं, यदि वे संविधान के उपबन्धों से असंगत हैं । इंग्लैण्ड में संसद की सर्वोच्चता पर बल दिया गया हैं

(ब) अधिनियम

विधान प्रशासन की शक्ति का प्रधान स्रोत है । विधान का स्रोत संविधान है । संविधान के अधीन विधान निर्माण करने की शक्ति संसद तथा राज्य के विधान मण्डलों को प्रदान की गई है । प्रशासन को शक्तियाँ विधान द्वारा ही सौंपी जाती है । जहां तक विधान की वैधता का प्रश्न है, यह मूलस्प में सांविधानिक विधि के क्षेत्र में आता है । परन्तु प्रशासनिक शक्ति के लिए यह आवश्यक है कि इसका प्रयोग अधिनियम के उपबंधों के अनुसार किया जाए । प्रशासनिक शक्ति का प्रयोग जो अधिनियम के उपबंधों के प्रतिकूल किया गया है विधिमान्य नहीं हो सकता है । यह सिद्धान्त प्रशासनिक विधि में साधारणतया अधिकारातीत के सिद्धान्त के नाम से जाना जाता है ।

प्रशासनिक अधिकारिता का मूल स्रोत अधिनियम है । अधिनियम द्वारा प्रशासनिक अभिकरणों की स्थापना की जाती है और उनको शक्तियाँ भी प्रदान की जाती है । यह सांविधानिक अपेक्षा है कि व्यक्ति का जीवन या व्यक्ति की स्वतंत्रता का हनन प्रशासन विधिक प्रक्रिया के किए बिना ही किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता को छीनता है तो वह कार्य के विपरीत होगा **(सतवन्त सिंह बनाम सहायक पासपोर्ट अधिकारी, नई दिल्ली, ए.आई.आर. 1967 एस.सी. 1836)** ।

प्रशासनिक शक्तियों को परिसीम अधिनियम में निर्धारित होने के साथ-साथ न्यायालय द्वारा विधिगत मान्यताओं का विवेचन करते समय भी स्थापित की जाती है । इस प्रकार बोर्ड ऑफ हाई स्कूल एण्ड इण्डर मीडिएट एजूकेशन, उत्तर प्रदेश बनाम धनश्याम दास गुप्ता के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने प्रभावित पक्ष को सुनने की प्रक्रिया को विवक्षित रूप में स्वीकर कर प्रशासनिक निर्णय को नैसर्गिक न्याय के नियम के विपरीत अभिनिर्धारित कर दिया ।

(द) अध्यादेश

क्या कार्यपालिका उसी कोटि की विधि बना सकता है जिस कोटि का विधान मंडल 7 इसका उत्तर समान रूप से दिया जा सकता है । भारत के संविधान के अधीन राष्ट्रपति और संसद या विधान सभा तथा विधान परिषद् वाले राज्य में विधान मण्डल के दोनों सदन सत्र में हों, यदि किसी समय राष्ट्रपति या राज्यपाल का समाधान हो जाता है कि परिस्थितियाँ विद्यमान हैं जिनके कारण तुरन्त कार्यवाही करना आवश्यक हो गया है तो राष्ट्रपति या राज्यपाल परिस्थितियों से अपेक्षित अध्यादेशों का प्रख्यापन कर सकते है । ये अध्यादेश उसी प्रकार मान्य होते हैं जिस प्रकार सक्षम विष्ज्ञय पर संपृक्त विधायिका द्वारा पारित विधान होता है ।

Unit – 5th

निबंध लेखन

प्रश्न # निबंध लेखन को समझाइए।

उत्तर- निबंध-लेखन में किसी एक विषय पर अपने क्विचारों को क्रमिक और व्यवस्थित रूप से लगभग 300 शब्दों में व्यक्त करना होता है। स्पष्टता और सजीवता निबंध के मुख्य गुण हैं। निबंध शब्द का अर्थ ही है भली-भांति बांधी हुई गद्य रचना। एक ही विषय से संबंधित बातें क्रम से ली जाती हैं। भावों की अस्तव्यस्तता निबंध की कमजोरी है। अच्छा निबंध लिखना एक कला है और अभ्यास के द्वारा ही इसे सीखा जा सकता है।

निबंध की विषय-वस्तु को लिखते समय उसे तीन मुख्य सोपानों में बांधा जाता है।

1. **प्रस्तावना-** इसे आरंभ या भूमिका भी कह सकते हैं। इसमें शीर्षक का स्पष्टीकरण और विषय का सामान्य परिचय हो सकता है। आरंभ कैसे किया जाए, इसका एक उत्तर नहीं हो सकता। यह कुछ विषय पर निर्भर करता है, कुछ लेखक की शैली पर। किसी सूक्ति से, किसी घटना या लघुकथा से, विषय का महत्व बताकर या शीर्षक का अर्थ समझाकर लोग निबंध प्रारंभ करते हैं। कभी-कभी सीधे विषय पर ही आकर प्रस्तावना की जाती है।

2. **वर्णन-** यह निबंध का मध्य भाग होता है, जिसमें विचारों का प्रसार और विषय की समीक्षा होती है। इसमें विषय से संबंधित बातें अलग-अलग अनुच्छेदों में बंधी होनी चाहिए। विषयांतर या आवृत्ति से बचना चाहिए। विभिन्न अनुच्छेदों में भी परस्पर गुंथाव हो और सारी बात एक सहज प्रवाह जैसी लगे।

3. **उपसंहार-** उपसंहार या अंत भी निबंध का महत्वपूर्ण सोपान है। निबंध के अंत तक आते-आते लेखक के विचार ऐसे बिन्दु तक सिमट आने चाहिए जहां पाठक को विषय की मुख्य स्थापनाओं से सहमत कराया जा सके। आरंभ की ही भांति अंत करने की भी विभिन्न रीतियां हो सकती हैं। विषय और लेखक की रुचि के अनुसार प्रायः सूक्ति, उद्धरण, कहावत, सारांश या भविष्य की संभावनाएं देकर निबंध को समाप्त किया जाता है। निबंध का उपसंहार ऐसा हो कि पाठक पर उसका स्थाई प्रभाव पड़े।

सावधानियां- निबंध-लेखन में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए-

1. दिये हुए विषयों में से एक विषय चुनिए जिस पर आप अन्य विषयों की अपेक्षा अच्छा अधिकार रखते हों। विषय चुनकर बार-बार मत बदलिए। इससे समय नष्ट होता है और परीक्षक पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता।
2. विषय चुनने के बाद उस पर मनन कीजिए और उत्तर-पुस्तिका पर उसकी कच्ची रूपरेखा बना लीजिए। यह निबंधरूपी भवन का नक्शा होगा जिस पर निबंध की इमारत खड़ी होगी।
3. आरंभ आकर्षक होना चाहिए।
4. मध्य भाग में कसाव होना चाहिए और पुनरावृत्ति नहीं होनी चाहिए।
5. भाषा शुद्ध, सरल और सुबोध होनी चाहिए। भारी-भरकम शब्दों, लंबे-चौड़े वाक्यों से बचना चाहिए। मुहावरे और लोकोक्तियों में भाषा को सजीव बनाने का गुण है। अतः उनका प्रयोग पर्याप्त करना चाहिए।
6. बीच में यदि कोई उद्धरण, सूक्ति आदि विषय के प्रतिपादन में सहायक हो तो अवश्य दें पर इनका अधिक प्रयोग भी अच्छा नहीं लगता।
7. निबंध सुलेख के लिए लिखा जाए, तभी आपके विचार पाठक पर प्रभाव डालेंगे।

प्रश्न. 1 निबन्ध एवं शोध निबन्ध का अर्थ एवं परिभाषा ।

उत्तर. निबन्ध फ्रेंच शब्द से लिया गया हैं उसका अंग्रेजी अनुवाद प्रयास हैं [Trial or Attempt] Montaigue 16वी शताब्दी का पहला फ्रेंच निबन्धकार था जिसने निबन्ध लिखा । इसके पश्चात् अंग्रेजी लेखको ने निबन्ध लिखे और अब यह अंग्रेजी साहित्य की एक सुस्थापित विधा बन गयी हैं ।

इस प्रकार निबन्ध किसी विषय विशेष की संक्षेप में सम्पूर्ण जानकारी देने वाला लेख हैं इसमें विषय के प्रारम्भ से अन्त तक की जानकारी अत्यन्त सार शब्दों में दी जाती हैं ।

निबंध लेखन में किसी एक विषय पर अपने विचारों को क्रमिक और व्यवस्थित रूप से लगभग 300 शब्दों से व्यक्त करना होता है । स्पष्टता और सजीवता निबंध के मुख्य गुण है । निबंध शब्द का अर्थ ही है भली-भांति बंधी हुई गद्य रचना । एक ही विषय से संबंधित बाते क्रम से ली जाती हैं । भावों की अस्तव्यस्तता निबंध की कमजोरी है । अच्छा निबंध लिखना एक कला है और अभ्यास के द्वारा ही इसे सीखा जा सकता है ।

निबन्ध की विषय-वस्तु को लिखते समय उसे तीन मुख्य सोपनों में बांटा जाता है ।

1. प्रस्तावना:- इसे आरम्भ या भूमिका भी कहा जा सकता है । इसमें शीर्षक का स्पष्टीकरण और विषय का सामान्य परिचय हो सकता है । आरम्भ कैसे किया जाए, इसका एक उत्तर नहीं हो सकता । यह कुछ विषयों पर निर्भर करता है, कुल लेखक की शैली पर । किसी सूक्ति से. किसी घटना या लघुकथा से विषय का महत्व बताकर या शीर्षक का अर्थ समझाकर लोग निबंध प्रारंभ करते है । कभी-कभी सीधे विषय पर ही आकर प्रस्तावना की जाती है ।

2. वर्णन:- यह निबंध का मध्य भाग होता है, जिसमें विचारों का प्रसार और विषय की समीक्षा होती है । इसमें विषय से संबंधित बातें अलग-अलग अनुच्छेदों में बन्दी होनी चाहिए । विषयांतर या आवृत्ति से बचना चाहिए । विभिन्न अनुच्छेदों में भी परस्पर गुंथाव हो और सारी बात एक सहज प्रवाह जैसी लगे ।

3. उपसंहार:- उपसंहार या अंत निबंध का महत्वपूर्ण सोपान है । निबंध के अंत तक आते-आते लेखक के विचार ऐसे बिन्दु तक सिमट आने चाहिए जहां पाठक को विषय की मुख्य स्थापनाओं से सहमत कराया जा सके । आरम्भ की ही भांति अंत करने की भी विभिन्न सारांश या भविष्य की संभावनाएं देकर निबंध को समाप्त किया जाता हैं । निबंध का उपसंहार ऐसा हो कि पाठक पर उसका स्थाई प्रभाव पड़े ।

सावधानियाँ:- निबंध लेखन में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए ।

1. दिये हुए विषयों में से एक विषय चुनिए जिस पर आप अन्य विषयों की अपेक्षा अच्छा अधिकार रखते हों । विषय चुनकर बार-बार मत बदलिए । इससे समय नष्ट होता है ।

2. विषय चुनने के बाद उस पर मनन कीजिए और उत्तर-पुस्तिका की उसकी कच्ची रूपरेखा बना लीजिए । यह निबंधरूपी भवन का नक्शा होगा जिस पर निबंध की ईमारत खड़ी होगी ।

3. आरम्भ आकर्षक होना चाहिए ।

4. मध्य भाग में कसाव होना चाहिए और पुनरावृत्ति नहीं होना चाहिए ।

5. भाषा, शुद्ध, सरल और सुबोध होनी चाहिए । भारी, भरकम शब्दों, लम्बे, चौडे वाक्यों से बचना चाहिए । मुहावरे और लोकोक्तियों में भाषा को सजीव बनने के गुण हैं । अतः इसका उपयोग प्रर्याप्त करना चाहिए ।

6. बीच में यही कोई उद्धरण, सूक्ति आदि विषय के प्रतिपादन में सहायक हो तो अवश्य दें पर इनका अधिक प्रयोग भी अच्छा नहीं लगता ।

7. निबंध सुलेख के लिए लिखा जाए, तभी आपके विचार पाठक पर प्रभाव डालेंगे ।

निबन्ध लेखन एक कला हैं क्योंकि:-

1. इसमें किसी विषय विशेष की सम्पूर्ण जानकारी देनी होती हैं ।
2. जानकारी संक्षेप में होनी चाहिये ।
3. जानकारी का सुव्यवस्थित कर आवश्यक हैं ।
4. भाषा को सरल, सहज और रोचक होना चाहिये ।